हिन्दी साहित्य में निबंध और निबंधकार

डॉ॰ गंगा प्रसाद गुप्त

जबलपुर विश्वविद्यालय की पी-एच० डी० उपाधि के लिये स्वीकृत शोध-प्रबंध

हिन्दी साहित्य में निबंध और निबंधकार

डा० गंगा प्रसाद गुप्त

●

रचना प्रकाशन

४५ ए, सराय खुल्दाबाद

इलाहाबाद-१

प्रथम संस्करण : १९७१

प्रकाशक
जीत मल्होत्रा
रचना प्रकाशन
४५ ए, सराय खुल्दाबाद
इलाहाबाद-१

मुद्रक
इलाहाबाद प्रेस
२७०, रानी मंडी,
इलाहाबाद-३

मूल्य १६५ रुपये

विषय-सूची

प्राक्कथन— ज

पहला अध्याय—निबन्ध का शास्त्रीय विवेचन एवं वर्गीकरण— ३-२२

१—निबन्ध की व्याख्या—

(क) निबन्ध क्या है, (ख) विभिन्न विद्वानों के मत और परिभाषाओं का विवेचन (ग) परिभाषा।

२—निबन्ध के भावपक्ष, चिन्तनपक्ष, रचनाशिल्प आदि के आधार पर विभिन्न प्रकार—

(क) परात्मक—(१) वर्णनात्मक, (२) विवरणात्मक।

(ख) निजात्मक—(१) विचारात्मक, (२) भावात्मक, (३) आत्म-परक या वैयक्तिक।

३—निबन्ध के तत्त्व—

(क) बोधपक्ष—विचारात्मक—चिन्तन, (ख) भावपक्ष—अनुकृति, (ग) संवेदनात्मक—इन्द्रियबोध, (घ) विधायक कल्पना।

(च) शैली।

दूसरा अध्याय—शैली-विवेचन— २५-४०

१—शैली की विवेचना—

(क) शैली क्या है (ख) शैली, रीति, प्रवृत्ति, एवं स्टाइल में अन्तर (ग) शैली की महत्ता (घ) शैली और व्यक्तित्व।

(च) शैली के भेद—प्रसाद, व्यास, समास, विवेचन, ,व्यंग, तरंग विक्षेप शैली प्रलाप और धारा।

२—शैली के अंग—

(क) अलंकार (ख) अर्थचमत्कार (ग) ध्वनि चमत्कार (घ) वाक्य सौन्दर्य।

३—शैली के गुण—

ओज, माधुर्य, प्रसाद, लाक्षणिकता, लोकोक्तियों और मुहावरों का प्रयोग, गांभीर्य, हास्य-विनोद, व्यंग, सजीवता, प्रभावोत्पादकता, स्वर-लहरी, लालित्य और उत्साह।

तीसरा अध्याय—निबन्ध शैली की स्थापना और विकास ४३-६१

(१) प्रारम्भिक स्वरूप, (२) मुसलमानों का प्रभाव, (३) अंग्रेजी राज्य के आगमन पर स्वरूप परिवर्तन, (४) भारतेन्दु युग में शैली का स्वरूप, (५) द्विवेदी युग में शैली का स्वरूप, (६) आधुनिक युग में शैली का स्वरूप, (७) समन्वयात्मक अध्ययन।

चौथा अध्याय—निबन्धकार का व्यक्तित्व ६५-७३

(१) साहित्य में साहित्यकार का व्यक्तित्व, (२) निबन्ध और निबन्धकार, (३) व्यक्तिवादी निबन्धों में लेखक का स्थान, (४) व्यक्तित्व की अभिव्यक्ति या प्रकाशन—

(क) व्यक्तित्व का विवेचन, (ख) व्यक्तित्व के प्रकार।

(१) बाह्य, (२) आन्तरिक।

(५) व्यक्तित्व की महत्ता, (६) साहित्य की अन्य विधाओं में व्यक्तित्व का स्थान।

पाँचवाँ अध्याय—व्यक्तित्व प्रधान निबन्धों की प्रमुख विशेषताएँ ७७-८६

(१) नाटकीय तत्वों का समावेश, (२) आख्यायिका-सुलभ रंजकता, (३) व्यक्ति वैचित्र्य का अनुभूतिपूर्ण अंकन, (४) सोद्देश्यता, (५) शैली की विशेषताएँ।

(क) आत्मीयता और भावमयता, (ख) विनोदमयता,

(ग) रोचकता और व्यंग्य, (घ) मनोवैज्ञानिकता।

(च) प्रथम पुरुष का प्रयोग।

छठवाँ अध्याय—व्यक्तिवादी निबन्ध और साहित्य की अन्य विधाएँ ८९-१०३

(१) गद्य काव्य, (२) जीवनी, (३) आत्मकथा, (४) संस्मरण, (५) पात्र, (६) आख्यायिका, (७) प्रगीत, (८) स्केच, (९) प्रबंध, (१०) रिपोर्ताज, (११) कथा, (१२) दैनंदिनी (डायरी) (१३) साक्षात वार्ता।

सातवाँ अध्याय—निबंध के विकास में व्यक्तिवादी निबंधों का स्थान १०७-१२१

(१) राष्ट्रीय जागरण की पृष्ठभूमि, (२) सामाजिक परिस्थिति, (३) धार्मिक आन्दोलन, स्वामी दयानन्द द्वारा, (४) निजात्मकता की देन, (५) ईसाईयों द्वारा गद्य का संवर्धन, (६) भारतेन्दु युग और उनका मंडल, (७) द्वितीय उत्थान—द्विवेदी युग, (८) तृतीय उत्थान

—शुक्लजी तथा अन्य निबन्धकार, (९) चतुर्थ उत्थान—छायावादी युग, (१०) नवीन प्रवृत्तियाँ।

(क) चरित्र-चित्रण और नाटकीयता की विधि।

(१) संवादात्मकता, (२) सचेष्टता, (३) भाषा की तीव्रता आदि का उपयोग।

(ख) अनौपचारिक वातावरण की सृष्टि, (ग) संस्मरणात्मक निबन्ध, (घ) रेखा-चित्र, (च) आलोचनात्मक निबन्ध, (छ) व्यंग्यात्मक शैली, (ज) निजात्मकता का पुट।

आठवाँ अध्याय—हिन्दी में व्यक्तिवादी निबन्धों के दो युग १२५-२९४

१—भारतेन्दु युग और नए प्रयोग—

(क) व्यक्तिवादी निबन्धों का प्रथम प्रवर्तक, (ख) विभिन्न विद्वानों के मत में व्यक्तिवादी निबन्धकार, (ग) व्यक्तिवादी निबन्धकारों का विवेचन।

(१) भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, (२) बालकृष्ण भट्ट, (३) प्रतापनारायण मिश्र, (४) बालमुकुन्द गुप्त।

२—पिछली दो पीढ़ियाँ और आज के व्यक्तिवादी निबन्धकार—

(१) अध्यापक पूर्णसिंह, (२) चन्द्रधर शर्मा गुलेरी, (३) पद्मसिंह शर्मा, (४) बाबू गुलाबराय, (५) पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, (६) माखनलाल चतुर्वेदी, (७) रायकृष्णदास, (८) वियोगी हरि, (९) चतुरसेन शास्त्री, (१०) पांडेय बेचनशर्मा 'उग्र' (११) शांतिप्रिय द्विवेदी, (१२) भदन्त आनन्द कौसल्यायन, (१३) जैनेन्द्र कुमार, (१४) रामवृक्ष बेनीपुरी, (१५) हजारीप्रसाद द्विवेदी, (१६) प्रभाकर माचवे, (१७) देवेन्द्र सत्यार्थी, (१८) कन्हैयालाल मिश्र 'प्रभाकर' (१९) हरिशंकर शर्मा, (२०) सियारामशरण गुप्त, (२१) विद्यानिवास मिश्र, (२२) महादेवी वर्मा, (२३) सुमित्रानन्दन पन्त, (२४) राजनाथ पाण्डेय, (२५) इन्द्रनाथ मदान, (२६) सद्गुरुशरण अवस्थी, (२७) सुधाकर पाण्डेय, (२८) हरिशंकर परसाई।

उपसंहार २९५-२९७

संदर्भ-ग्रंथ २९८-३०५

प्राक्कथन

मेरे शोध-प्रबंध का विषय—'हिन्दी साहित्य में व्यक्तिवादी निबंध और निबंधकार' है। ऊपर से यह विषय सरल दिखाई पड़ता है किन्तु इसमें कुछ ऐसी जटिलता निहित है कि जिस पर कदाचित पूर्णरूप से अभी तक विवेचन नहीं किया गया। पहली कठिनाई जो इस विषय पर कुछ भी लिखने के प्रारंभ में हमारे सम्मुख उपस्थित होती है, वह है व्यक्तित्व का स्वरूप-विवेचन। हम साहित्य में ऐसे सूक्ष्म भाव-वाचक शब्दों का प्रयोग बिना किसी संकोच के किया करते हैं परन्तु अधिकांश में हमारे मन में कोई निश्चित भाव-रूप नहीं होता। इस विषय का केन्द्रीय शब्द है 'व्यक्तित्व'। इस शब्द का निश्चित, सुस्पष्ट भाव-रूप क्या है ? क्या अब तक हमने उसका कोई स्पष्ट मानचित्र अपने सम्मुख उपस्थित कर लिया ? कदाचित नहीं।

हम ऐसे अनेक शब्दों को अपना कर काम चला रहे हैं। परिवर्तन इतना ही करते हैं कि उनके स्थान में वैसे ही भाव-व्यंजक संस्कृत के पर्यायों को प्रयुक्त करने लगते हैं। अंग्रेजी में दो शब्द 'इंडिविजुअलिटी' (individuality) और 'पर्सनालिटी' (personality) हैं। इनके स्थान में हम 'व्यक्तित्व' शब्द का प्रयोग करने लगे। ऊपर से बात बड़ी स्पष्ट दिखती है। प्रत्येक मानव व्यक्ति का अपना एक ऐसा वैशेष्य होता है जो उसे मानव समुदाय में अलग खड़ा कर देता है। जिस प्रकार हम उसके शारीरिक वैशेष्य के आधार पर सदैव अलग पहचान सकते हैं उसी प्रकार उसकी कुछ मानसिक विशेषताओं के आधार पर उसे दूसरों से अलग जान सकते हैं। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि मनुष्य का व्यक्तित्व स्पष्ट ही दो भागों में विभक्त किया जा सकता है। एक भाग है उसका भौतिक वैशेष्य, जिसे सामान्यतया 'इंडिविजुअलिटी' (individ uality) कहते हैं, और दूसरा है उसका आंतरिक सूक्ष्म वैशेष्य जिसे प्रायः 'पर्सनालिटी (personality) कहते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि मनुष्य का व्यवहारिक जीवन इन दोनों का जटिल योग हुआ करता है। यह दोनों परस्पर किस प्रकार एक दूसरे को प्रभावित करते हैं यह फिर एक जटिल बात है। किन्तु एक बात निश्चित है कि मनुष्य के व्यक्तित्व का जो भाग उसकी साहित्यिक रचना को प्रभावित करता है वह होता है उसका आंतरिक वैशेष्य, उसकी पर्सनालिटी (personality) इंडिविजुअलिटी

(individuality) नहीं। इसलिये किसी व्यक्ति की साहित्यिक रचना से उसके व्यक्तित्व का संबंध जोड़ते समय हम उसके (लेखक) 'पर्सनालिटी' (personality) भाग पर ही दृष्टि रखते हैं। वैसे हिन्दी में प्रचलित 'व्यक्तित्व' शब्द इन दोनों अंग्रेजी शब्दों (Individuality and personality) का सम्मिलित रूप ही है। शारीरिक व्यक्तित्व तो सभी जीवों का होता है परन्तु मानसिक व्यक्तित्व बुद्धिजीवी वर्ग में ही मिलेगा। व्यक्ति में एक व्यक्ति विशेष रहता है जबकि व्यक्तित्व में सारा वातावरण, जीवनानुभूति, विचार, सारी मौलिकताएँ, कलाएँ होती हैं जो प्राय: किसी न किसी मात्रा में सभी साहित्यकारों में मिलेंगी। मनोगठन ही व्यक्तित्व है। व्यक्तित्व का अर्थ मौलिकता है अनुकरण नहीं। निबंध इसी का परिणाम है। उसमें इसकी मात्रा अधिक मिलती है। किसी व्यक्ति के सोचने समझने लिखने के विशेष ढंग को ही व्यक्तित्व कहेंगे।'[१] इसमें व्यक्ति की सारी मानसिक कलात्मक विशिष्टताएँ सम्मिलित रहती हैं। इन्हीं विशिष्टताओं के संगठित स्वरूप को हिन्दी साहित्य में व्यक्तित्व की संज्ञा दी गई। व्यक्तित्व व्यक्ति का होता है। 'व्यक्तित्व व्यक्ति के मनोदैहिक तंत्र का वह गत्यात्मक संगठन है जो उसके वातावरण के अपूर्व अभियोजन को निर्धारित करता है।'[२]

'पर्सनालिटी' शब्द का विकास ग्रीक भाषा के 'परसोना' शब्द से हुआ माना जाता है जिसको रोम के लोग रंगमंच पर नाटक खेलते समय पहना करते थे। वे लोग व्यक्तित्व का अर्थ अभिनय से भी लेते हैं। व्यक्तित्व के द्वारा किसी को प्रभावित किया जाता है। व्यक्तित्व में विभिन्न मानसिक व शारीरिक गुणों का समन्वय रहता है। इन गुणों के समन्वय एवं संगठन को ही व्यक्तित्व कहते हैं।'[३] 'व्यक्तित्व में व्यक्ति के बाह्य, आंतरिक (मनोशारीरिक) जन्मजात (Inborn) और अर्जित (Acquired) गुणों अथवा पहलुओं का समन्वय अथवा संगठन रहता है।'[४] हिन्दी में प्रचलित व्यक्तित्व शब्द इसी का पर्याय है। मैंने व्यक्तिवादी निबंधों और निबंधकारों का जो विवेचन किया है तथा व्यक्तित्व को जिस रूप में लिया है वह इसी आधार पर है।

---

१. इनसाइक्लोपीडिया ब्रिटेनिका पृ० ६०५

२. Personality is the dynamic organic organisation within the individual of those psychophysical systems that determine his unique adjustment to his environments, शिक्षा मनोविज्ञान जगदानन्द पाण्डेय पृ० २५८

३. Superimposed upon (but interwoven with) the physical individuality is the mental individuality, which we call personality—

४. शिक्षा मनोविज्ञान—श्री जगदानंद पांडेय—पृ० २५८।

मानसिक व्यक्तित्व (Mental personality) को ही सर्वत्र प्रमुखता मिली है।

साहित्य अनेक भागों में विभक्त किया जाता है और किया भी जाना चाहिये। मनुष्य का आंतरिक व्यक्तित्व स्वयं एक जटिल वस्तु है। सुभीते के लिए हमने उसे कुछ भागों में बाँट लिया है। सामान्यतया उसकी राग प्रवणता और बौद्धिकता ऐसे दो स्पष्ट से भाग हैं जिनके आधार पर हम साहित्यिक रचना को दो भागों में बाँट लेते हैं। जिस रचना में राग की प्रधानता होती है उसे हम बौद्धिकता प्रधान साहित्य से अलग करके देख सकते हैं। राग का अधिकतम हिस्सा हमें गीतों में दिखता है। कथा साहित्य में राग न्यूनाधिक मात्रा में बौद्धिकता से मिलकर राग-विचार योग की अनेक भूमिकाएँ उत्पन्न करता है। निबंधों में सामान्यतया बौद्धिकता का प्राधान्य होता है। इस प्रकार मानव-जीवन के दो आंतरिक आधार पर हम साहित्य को इन भागों में विभक्त कर व्यावहारिक क्षेत्र में अपना काम चलाते हैं।

अभी हम निबन्ध को बौद्धिक क्षेत्र की वस्तु कह आये हैं। परन्तु साहित्य में इस प्रकार अत्यन्त निश्चय के साथ कोई भी बात नहीं कही जा सकती। जिस मानव-अन्तःकरण का अभिव्यंजन साहित्य है वह स्वयं इस प्रकार का है कि उसे परिभाषाओं और वर्गों में वैसी स्पष्टता से नहीं बाँटा जा सकता जैसी स्पष्टता से हम स्थूल संसार की वस्तुओं को बांट लेते हैं। विशुद्ध क्षेत्र की हमारी प्राप्तियाँ बहुत कुछ स्पष्ट रूप से बाँटी जा सकती हैं, किन्तु जहाँ राग में प्रवेश किया वहाँ धुंधलेपन का भी प्रवेश हुआ। निबन्ध विशुद्ध रूप से बौद्धिक कृति हो सकता है किन्तु तब वह साहित्य के अन्तर्गत नहीं विज्ञान के अन्तर्गत स्थान पायेगा। साहित्य के अन्तर्गत आने के लिए राग का न्यूनाधिक मात्रा में आलिंगन करना ही पड़ेगा। और यह आलिंगन सम्पर्क की दृष्टि से अनन्त भूमिकाओं का हो सकता है। जहाँ निबंध मानव-मस्तिष्क के चिन्तन परिणामों को राग सिक्त करके व्यक्त करेगा वहाँ वह जाने अनजाने गीत की ओर प्रयाण करेगा।

बस यही है मेरे विषय का चिंतन आधार। बौद्धिक निर्णयों में भेद होता है किन्तु इतना नहीं जितना रागात्मक प्राप्तियों में होता है। जब कोई लेखक अपनी निबंध-रूप रचना में अपने अन्तरव्यक्तित्व का, अपनी 'पर्सनालिटी' का, इस मात्रा में प्रवेश कर देता है कि वह उसके व्यक्तित्व से समरूप होकर उसी के समान खड़ी हो जाय और उसमें लेखक के व्यक्तित्व का स्पष्ट दर्शन होने लगे तब हम निबन्ध को व्यक्तित्व प्रधान कहेंगे।

अब हमें यह देखना है कि ऐसे निबंधों की विवेचना का आधार क्या होगा। जब हम किसी लेखक के व्यक्तित्व प्रधान निबंध को पढ़ते हैं तब हम किस बात का अध्ययन करते हैं—उसके बौद्धिक चिंतन का, उसकी रागात्मक अनुभूतियों का अथवा

उसकी मूक प्रवृत्तियों का। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि रचना में इन सबका प्रभाव होगा। लेखक के विचार होंगे, लेखक की अनुभूतियां होंगी और इन दोनों के नीचे उसकी मूक प्रवृत्तियों का आधार होगा। जब हम कोई वैज्ञानिक निबन्ध पढ़ते हैं तो हमारा सारा प्राप्य उस निबन्ध में ही निहित रहता है। उसे प्राप्त करने के लिए हमें वैज्ञानिक के व्यक्तिगत जीवन से परिचित होने की आवश्यकता नहीं रहती। व्यक्तिवादी अथवा व्यक्तित्वप्रधान निबन्धों में यह बात नहीं है। यहाँ पर हमारा समूचा प्राप्य निबंध में निहित नहीं रहता। इस तरह के समर्थ लेखक हो सकते हैं जो अपने व्यंग्य के अधिकांश को अपनी रचना में व्यक्त कर सकें किन्तु व्यक्तित्व प्रधान रचना में ऐसी सफलता गीत को ही प्राप्त होगी। चिंतन राग के संबद्ध होकर जब भी निबन्ध के माध्यम से बाहर निकलेगा, वह किसी न किसी मात्रा में लेखक के व्यक्तित्व से परिचय की अपेक्षा रखता है। यही कारण है कि ऐसे निबंधों के सफल अध्ययन के लिए इनकी पृष्ठभूमि के रूप में उनके लेखकों से यथासंभव घनिष्ठ परिचय स्थापित किया जाय।

प्रस्तुत शोध प्रबंध को आठ अध्यायों में विभक्त किया गया है जिनमें व्यक्तिवादी निबंधों से संबंधित सभी आवश्यक पक्षों की विवेचना करने का प्रयास है। प्रथम अध्याय में निबन्ध की शास्त्रीय परिभाषा के बारे में प्रमुख विद्वानों के मतों का सूक्ष्म अध्ययन करते हुये परिभाषा प्रतिपादित की गई है। साथ ही निबंधों के विभिन्न पक्षों का विश्लेषण करने के साथ उसके वर्गीकरण पर समुचित विचार किया गया है। साहित्य में प्रचलित विभिन्न दृष्टिकोणों से किए वर्गीकरण को दृष्टिगत रख मान्य वर्गीकरण का ही विवेचन किया गया है जिसके कुल ५ ही भेद स्वीकार किये हैं। अंत में निबंध के उन तत्वों का भी विवेचन है जो निबंध को सही स्वरूप देने में समर्थ होते हैं। इन्हीं तत्वों के संगठित स्वरूप का नाम निबंध होता है।

प्रबंध के दूसरे अध्याय में निबंध के प्रमुख अंग शैली का विश्लेषण किया गया है। इस विश्लेषण में शैली का स्वरूप, उसकी परिभाषा, विद्वानों के मत, शैली के भेद-प्रसाद, व्यास, समास, विवेचन, व्यंग्य, तरंग, विक्षेप, धारा शैली की विशेषताओं के दिग्दर्शक सभी गुणों की व्याख्या, शैली के परिपोषक सभी अंगों का विवेचन सम्मिलित है।

तीसरे अध्याय में शैली की स्थापना और विकास पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है। प्रारंभ से आज तक निबन्ध शैली को जिन-जिन दुर्गम-सुगम संगठित-विश्रंखलित घाटियों से होकर निकलना पड़ा, उसमें जो भी उतार-चढ़ाव आये उनका विवेचन है। शैली का प्रारंभिक स्वरूप, मुसलमानों और अंग्रेजी राज्य के समय का उसका स्वरूप परिवर्तन, भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, आधुनिक युग में उसका कायाकल्प सभी पर विचार करने के साथ ही अंत में सभी का समन्वयात्मक विश्लेषण है।

चौथे अध्याय में इस बात का विवेचन किया गया है कि इस श्रेणी के निबंधों में निबन्धकार का अस्तित्व एवं व्यक्तित्व किस मात्रा एवं किस स्वरूप में उपस्थित, सम्मिलित रहता है। यों तो साहित्य की सभी विधाओं में लेखक का व्यक्तित्व किसी न किसी रूप में विद्यमान रहता है परन्तु व्यक्तिवादी निबन्धों में इसकी मात्रा अपेक्षाकृत अधिक विद्यमान रहती है। अतः उस स्थिति की ही व्याख्या की गई है। साथ ही इसी अध्याय में 'व्यक्तित्व' शब्द का भी विवेचन किया गया है, उसके स्वरूपों का निर्देशन करने के साथ ही उसकी महत्ता पर समुचित प्रकाश डाला गया है। इस सबके अतिरिक्त इस तथ्य पर दृष्टिपात किया गया है कि अन्य साहित्यिक विधाओं में लेखक के व्यक्तित्व की क्या स्थिति रहती है।

व्यक्तिवादी निबन्धों की प्रमुख विशेषताओं की विवेचना को पाँचवे अध्याय की प्रतिपाद्य सामग्री में सम्मिलित किया गया है। अन्य साहित्यिक निबंधों से हम व्यक्तिवादी निबंधों को किस आधार पर अलग श्रेणी में रखें, यही इस अध्याय का विषय है। व्यक्तिवादी निबंधों की कसौटी में जिन बातों को प्रमुख माना गया है उनमें उल्लेख है—'मैं' के माध्यम से आत्माभिव्यक्ति, नाटकीय तत्व, आख्यायिका, सुलभ रंजकता, व्यक्ति वैचित्र्य का अनुभूतिपूर्ण मिश्रण, उद्देश्य की पूर्णता, शैली। इन सभी तत्वों का पूर्ण विवेचन करने के साथ ही व्यक्तित्व-वादी निबंधों की शैली की विशेषताओं पर भी प्रकाश डाला गया है जिसे सर्वथा मौलिक माना जा सकता है।

प्रबंध के छठवें अध्याय की महत्ता अपने ढंग की अलग ही है। अभी तक साहित्य में सभी विधाओं का कुछ न कुछ विवेचन मिलेगा परन्तु तुलनात्मक अध्यापन अपेक्षाकृत कम ही है—विशेषकर निबंधों की प्रचलित साहित्यिक विधाओं से तुलना कर अन्य विधाओं के साथ ही व्यक्तिवादी निबंधों की स्थिति की सुस्पष्ट विवेचना की गई है। परन्तु इसमें जो विधायें शामिल हैं वे अपेक्षाकृत व्यक्तिवादी निबंधों के अधिक निकट हैं क्योंकि उनमें व्यक्तित्व की अधिकांश विशेषताएँ मिल जाती हैं। जिन विधाओं से तुलना की गई है उनमें गद्य काव्य, जीवनी, आत्मकथा, संस्मरण, पत्र, आख्यायिका, प्रगति, स्केच, प्रबंध, रिपोर्ताज, कथा, दैनंदिनी, डायरी, साक्षातवार्ता सम्मिलित है। ऐसा विवेचन अभी देखने में नहीं आया है। इसमें यथासंभव विद्वानों के मतों के साथ इस तथ्य का प्रतिपादन सम्यक्रूप से एक ही स्थान पर किया गया है।

प्रबंध के सातवें अध्याय में निबंध के प्रादुर्भाव से लेकर आधुनिक युग के विकसित स्वरूप तक का विवेचन किया गया है। उसमें गद्य के उद्भव तथा विकास की विभिन्न दिशाओं एवं स्थितियों पर विचार करने के साथ ही निबंध को जिन-जिन परिस्थितियों से होकर निकलना पड़ा, उसमें जिन नवीन प्रवृत्तियों का समय-समय पर आगमन हुआ, उनका समुचित विवेचन है। भारतेन्दु युग, द्विवेदी युग, शुक्ल युग,

छायावादी युग आदि में निबंध की स्थितियों का सम्यक् स्वरूप-विवेचन के साथ उस समय की नैबन्धिक विशेषताओं का उद्घाटन किया गया है। तत्सामयिक निबंध के स्वरूप और प्रचलित नवीन प्रवृत्तियों पर विस्तृत प्रकाश डाला गया है।

उपर्युक्त सातों अध्यायों को प्रबंध का एक भाग भी माना जा सकता है क्योंकि प्रबंध-विषय के अनुसार इन सातों अध्यायों में क्रमशः व्यक्तिवादी निबंधों से सम्बंधित सभी पक्षों का उद्घाटन किया गया है। परिभाषा, विकास, विशेषताएँ, महत्ता, विवेचन, प्रकार भेद, तुलना सभी परिपार्श्वों का स्पर्श किया गया है।

किन्तु प्रबंध का दूसरा भाग विषय के अनुरूप आठवें अध्याय में निहित है। यह अध्याय अपेक्षाकृत विस्तृत है। व्यक्तिवादी निबंधकारों का सम्यक् विवेचन, उनके निबंधों की विशेषताओं का उद्घाटन, भाषा शैली, भाव-विचारों का विश्लेषण इसी अध्याय में मिलेगा। इस श्रेणी के निबंधों एवं निबंधकारों का वर्गीकरण पूर्वविवेचित व्यक्तिवादी निबंधों की कसौटी के आधार पर ही किया गया है। यों तो वैज्ञानिक ढंग से सीमांकन सर्वथा कठिन ही है। क्योंकि एक ही संग्रह में हमें कई प्रकार के निबंध मिल जाते हैं—एक ही निबंधकार कई प्रकार के निबंध लिखता है। फिर भी जिन निबंधों और निबंधकारों में व्यक्तिवादी विशेषताएँ अपेक्षाकृत अधिक मिली हैं उन्हीं का विवेचन इस अध्याय में मिलेगा। वैसे यदि चाहें तो व्यक्तिवादी निबंधों एवं निबंधकारों का और भी सूक्ष्म विवेचन कर कुछ अधिक मौलिकता का दावा किया जा सकता है—जैसे आत्मपरक व्यक्तिवादी, विचार प्रधान व्यक्तिवादी, भाव प्रधान व्यक्तिवादी, संस्मरण प्रधान व्यक्तिवादी आदि। मेरे विचार से यह विवेचन मौलिकता का दावा भले कर ले परन्तु सही उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती। क्योंकि इस प्रकार के वर्गीकरण के योग्य निबंध हमें हिन्दी साहित्य में बहुत कम मिलेंगे। दूसरे इस प्रकार के विवेचन से भ्रम भी हो सकता है। इसका कारण यह है कि इसकी सूक्ष्म कसौटी बनाना कठिन है। एक ही निबंध कई वर्गों में रखा जाने योग्य प्रतीत होता है। किसी ने एक निबंध को आत्म प्रधान के वर्ग में रखा तो दूसरा व्यक्ति उसे पूर्ण तर्क के साथ भाव प्रधान में ही रख सकता है। हिन्दी निबन्धों में ऐसी विवेचना कठिन है। इसके अतिरिक्त निबंधकारों का इतना सूक्ष्म वर्गीकरण तो और भी कठिन बात है। कारण है कि निबंधकार का उद्देश्य वर्गीकरण पर निहित न होकर आत्माभिव्यक्ति पर निहित रहता है। लिखते समय वह जिन-जिन भाव स्थलों पर विचरण करता चलता है उन्हीं की प्रधानता बीच-बीच में मिलती है अतः किसी निबन्ध में एक तथ्य की प्रधानता है तो दूसरे में दूसरे की। और कहीं-कहीं एक ही निबंध में कई तथ्यों का समावेश मिलता है। चूँकि निबंध स्वतन्त्र चिन्तन का परिणाम होता है अतएव ऐसी सूक्ष्म सीमा निर्धारण का दावा करना असम्भव है। इसी दृष्टि से व्यक्तिवादी निबन्धों का और भी सूक्ष्म विवेचन नहीं

किया गया और सभी को व्यक्तिवादी निबन्धों में सम्मिलित कर लिया गया है।

इन अध्यायों में विवेचित निबन्धकारों को दो पीढ़ियों में बाँटा गया है। प्रथम पीढ़ी में भारतेन्दु युग के निबन्धकार-भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, बालकृष्ण भट्ट, प्रतापनारायण मिश्र, बालमुकुन्द गुप्त हैं तो उसके बाद की पीढ़ी में शेष सभी निबन्धकार—पूर्णसिंह, पदुमलाल पुन्नालाल बख्शी, पद्मसिंह शर्मा, सियारामशरण गुप्त, हजारीप्रसाद द्विवेदी, जैनेन्द्रकुमार, भदन्त आनंद कौसल्यायन, प्रभाकर माचवे, माखनलाल चतुर्वेदी, वियोगी-हरि, रामकृष्णदास, कन्हैयालाल मिश्र प्रभाकर, रामवृक्ष बेनीपुरी, बाबू गुलाबराय, सदगुरुशरण अवस्थी, महादेवी वर्मा, सुमित्रानंदन पंत, आदि शामिल हैं। इन सभी को आत्मभाव व्यञ्जना की प्रधानता के आधार पर ही इस श्रेणी में रखा गया है और इन्हीं विशेषताओं के आधार पर उनका विवेचन है।

यहाँ व्यक्तिवादी साहित्य के बारे में कुछ कहना असंगत न होगा। हिन्दी साहित्य की विधायें काव्य को छोड़कर स्वयं अभी इतनी प्रौढ़ नहीं मानी जा सकतीं जिससे बिना हिचकिचाहट के कहा जा सके कि अमुक विधा का भंडार सम्पन्न है। यों तो साहित्य कभी पूर्ण नहीं होता, उसमें नित्य प्रति कुछ न कुछ नवीन सृजन, नवीन दिशा दर्शन होता रहता है और सहस्राब्दियों से यही होता आया है। अतः पूर्णता की बात करना तो अनुपयुक्त होगा, फिर भी साहित्य की विधा-भंडार की चर्चा तो की ही जा सकती है। हिन्दी के चाहे कथा-साहित्य को लीजिए अथवा आलोचना साहित्य को, सर्वत्र अपूर्णता और अभाव परिलक्षित होता है—विशेषकर नई साहित्यिक विधाओं-निबन्ध, संस्मरण, स्केच, गद्य काव्य, आत्मकथा आदि में। इनका साहित्य बहुत सीमित मात्रा में है। यहाँ हमें निबन्ध (व्यक्तिवादी निबंधों)—की ही चर्चा करनी है। यों तो हिंदी निबंध साहित्य का प्रादुर्भाव भारत में अँग्रेजी प्रभाव के बाद से होता है अतः लोग इसे अँग्रेजी साहित्य की देन कहते हैं। माना कि निबन्ध अँग्रेजी से प्रभावित है फिर भी उसमें आत्मा भारतीय, आवरण भारतीय है अतः वह भारतीय ही माना जायेगा। निबंध साहित्य अभी एक शताब्दी भी प्राचीन नहीं है। नवीन विधा होने के साथ ही इस अवधि में उसकी रचना भी कम ही हुई है। इस ओर लेखकों का ध्यान ही कम गया था। भारतेन्दु मण्डल के लेखकों ने यद्यपि इस ओर विशेष कार्य किया, परन्तु उसके बाद अनेक वर्षों तक कोई प्रौढ़ लेखक नहीं दिखाई पड़ा।

महावीरप्रसाद द्विवेदी के आगमन ने रिक्त स्थान की पूर्ति की और शुक्लजी ने उसे पल्लवित और पुष्ट किया। आज यद्यपि निबन्धकारों की अच्छी संख्या है परन्तु उनके लेखन मात्र को संतोषजनक नहीं माना जा सकता।

सबसे बड़ी बात तो यह है कि यदि हिंदी में निबंधों एवं निबंधकारों की वर्तमान संख्या से संतोष भी कर लिया जाये तो मेरे विवेच्य-विषय की साहित्य-सामग्री

को पूर्ण संतोषजनक तो किसी स्थिति में नहीं माना जा सकता। व्यक्तिवादी निबंधों एवं निबंधकारों की संख्या हिंदी में नगण्य है। किसी भी व्यक्ति को तत्संबन्धी सामग्री एकत्र करने के लिए हजारों पृष्ठ पलटने पर भी ठोस एवं काफी मात्रा में सामग्री नहीं मिलेगी। मैंने जब इस दिशा में प्रयास किए तो देखा कि न तो कोई पूर्णरूपेण व्यक्तिवादी निबन्धकार है (कुछ को छोड़कर) और न ही व्यक्तिवादी निबंधों की अच्छी संख्या है। लेखकों के निबंध-संग्रहों से एक-एक लेखों को देखना और छानना-बीनना पड़ा। उनकी संख्या के आधार पर ही निबंधकारों का परिगणन हुआ और उन विशेषताओं के आधार पर निबंधों का विवेचन।

वैसे तो निबंधों की आलोचना-विवेचना भी अपेक्षाकृत कम ही हुई है। निबंध-संबन्धी आलोचना ग्रंथों की संख्या बहुत कम मिलेगी। अभी तक निबंध-सम्बन्धी जो शोध-प्रबन्ध प्रस्तुत किए गए हैं वे प्रायः अभी भी अप्रकाशित हैं। उन शोध-प्रबन्धों में भी निबन्ध साहित्य-विधा का सामान्य विवेचन है किसी पक्ष या प्रकार विशेष का नहीं। किसी पक्ष या प्रकार विशेष का विवेचन तो स्वतन्त्र रूप से हिन्दी साहित्य में दिखाई नहीं पड़ा। निबन्धों का सांगोपांग सामान्य विवेचन हो सकता है, किया जा सकता है परन्तु उसके प्रकार या पक्ष विशेष का विवेचन सामग्री की न्यूनता एवं आलोचना ग्रंथों की कमी के कारण एक कठिन समस्या है। स्वतन्त्र विवेचन, स्वतंत्र ग्रन्थों की अनुपलब्धता के कारण इस दिशा में बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। निबन्ध ग्रंथों से जहाँ काम नहीं चला वहाँ निबन्धकारों अथवा उनके निकट आलोचकों और हिन्दी साहित्य के प्रमुख कर्णधारों से संबन्ध स्थापित करना पड़ा है। प्रायः आलोचना ग्रन्थों एवं विवेचन की कमी के कारण स्वयं ही दिशा-निर्माण का कार्य सम्पन्न करना पड़ा है। अतएव निबन्ध साहित्य के इस महत्वपूर्ण अभाव को पूरा करने का प्रयास इस प्रबन्ध में है।

इस दिशा में यह भीत प्रयत्न है। किस मात्रा में अपने प्रयत्नों में सफल हुआ हूँ इसका निश्चय न मेरे लिए सम्भव है और न कदाचित हितकर। मैंने तो केवल इस क्षेत्र के कुछ लेखकों के, उनकी रचनाओं की पृष्ठभूमि पर मानसिक व्यक्तित्व का उद्घाटन करने का प्रयास किया है।

यह कार्य सहज साध्य नहीं है। मैं अपने इस प्रयत्न में कदाचित सफल न हो सकता यदि मुझे कुछ समर्थ व्यक्तित्व प्रधान निबन्ध लेखकों से उनके ही शब्दों में उनके व्यक्तित्व का विवेचन न मिलता। मैं कैसे उन्हें धन्यवाद दूँ। यहाँ पर उनके नामों का उल्लेख करके मैं उन्हें सादर प्रमाण करता हूँ। आदरणीय बाबू गुलाबराय जी, (अब स्वर्गीय) श्री शांतिप्रिय द्विवेदी, (अब स्वर्गीय) श्री कन्हैयालाल मिश्र, 'प्रभाकर' ने विशेष सहयोग दिया है। इनके अतिरिक्त आदरणीय डा० राजबली

पांडेय (अध्यक्ष, प्राचीन भारतीय इतिहास एवं संस्कृति विभाग जबलपुर विश्वविद्यालय) (अब कुलपति) डा० उदय नारायण तिवारी (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, जबलपुर विश्वविद्यालय), डा० विनयमोहन शर्मा (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय), श्री जयनाथ नलिन, (रीडर, कुरुक्षेत्र विश्वविद्यालय) श्री आचार्य नन्द-दुलारे बाजपेयी, (अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सागर विश्वविद्यालय) (अब स्वर्गीय) डा० विजयेन्द्र स्नातक (रीडर, हिन्दी विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय) आदि ने भी समय-समय पर परामर्श दे मुझे अनुगृहीत किया है। मैं इन विद्वानों को विनम्र प्रणाम करता हूँ, जिन्होंने हर कठिनाई में मेरा मार्गदर्शन किया।

सबसे अधिक कृतज्ञ हूँ मैं आदरणीय प्रो० हरिदत्तजी दुबे का, जिनके सफल निर्देशन में यह शोध प्रबंध तैयार हो सका। उन्होंने अपने समय की परवाह न करते हुए, जब भी मैं कठिनाई लेकर उपस्थित हुआ तत्क्षण उन्होंने उसका सतर्क निवारण किया। उन्होंने मेरा पद-पद पर मार्ग दर्शन करने के साथ ही निराशा के क्षणों में साहस एवं संबल देकर मुझे उल्लसित भी किया। उन्हीं की कृपा एवं आशीर्वाद के फलस्वरूप यह प्रबंध इतनी अल्प अवधि में प्रस्तुत करने में समर्थ हुआ हूँ। मैं नम्रता-पूर्वक उन्हें नमन करता हूँ।

विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रति आभार प्रदर्शित कर यद्यपि उनसे प्राप्त सहयोग से मुक्त नहीं होना चाहता। शोध-वृत्ति देकर एवं प्रबंध-प्रकाशन की अनुमति देकर उन्होंने मेरे इस कार्य में बड़ी मदद की है। बिना आर्थिक सम्बल के आज के युग में कोई भी कार्य पूरा होना असम्भव सा ही है। मैं उनके प्रति हृदय से कृतज्ञ हूँ।

विश्वविद्यालय के समक्ष मैंने उपाधि के लिए जिस रूप में शोध-प्रबंध प्रस्तुत किया था, उसमें अनेक संशोधन-परिवर्द्धन करके उसे प्रकाशित किया जा रहा है। जिस भी रूप में बन सका अब यह ग्रंथ आप सबके समक्ष है। यदि इससे पाठकों, जिज्ञासुओं और छात्रों को लाभ हुआ तो मैं अपना श्रम सार्थक समझूँगा।

—गंगाप्रसाद गुप्त